तुल्य है। उसकी रात्रि की भी यही परिधि है। इस परिमाण के तीस दिवा-रात्रि से उसका एक मास बनता है और बारह मास का एक वर्ष होता है। ऐसे सौ वर्षों के बाद ब्रह्मा का देह शान्त होने पर प्रलय हो जाती है। इसका अर्थ है कि श्रीभगवान् द्वारा अभिव्यक्त की गई शक्ति पुनः उन्हीं में लय हो जाती है। समय आने पर उनकी इच्छानुसार फिर सृष्टि-प्रकाश होता है। वैदिक सूक्ति है, 'एक होने पर मैं बहुरूप धारण करूँगा।' इस संकल्प से वे माया शक्ति में अपना प्रकाश करते हैं और सम्पूर्ण प्राकृत सृष्टि फिर प्रकट हो जाती है।

प्रकृतिं स्वामवष्टभ्य विसृजामि पुनः पुनः।
भूतग्राममिमं कृत्स्नमवशं प्रकृतेर्वशात्।।८।।

प्रकृतिम्=अपरा प्रकृति में; **स्वाम्**=अपनी; **अवष्टभ्य**=प्रवेश कर; **विसृजामि**=रचता हूँ; **पुनः-पुनः**=बारम्बार; **भूतग्रामम्**=प्राकृत सृष्टि को; **इमम्**=इस; **कृत्स्नम्**=सम्पूर्ण; **अवशम्**=परतन्त्र; **प्रकृतेः**=प्रकृति के; **वशात्**=वश से।

अनुवाद

सम्पूर्ण सृष्टि मेरे आधीन है। मेरे संकल्प से ही यह बारंबार प्रकट होती है और मेरे ही संकल्प से अन्त में इसका नाश होता है।।८।।

तात्पर्य

पूर्ववर्णन के अनुसार, यह जड़तत्त्व श्रीभगवान् की अपरा (निकृष्ट) शक्ति की अभिव्यक्ति है। सृष्टिकाल में अपरा शक्ति 'महत्तत्त्व' के रूप में अभिव्यक्त होती है और प्रथम पुरुषावतार महाविष्णु के रूप में श्रीभगवान् उसमें प्रवेश करते हैं। वे कारणार्णव में लेट कर असंख्य ब्रह्माण्डों को उच्छ्वसित करते हैं और फिर प्रत्येक ब्रह्माण्ड में गर्भोदकशायी विष्णु के रूप से प्रविष्ट हो जाते हैं। इस विधि से ब्रह्माण्ड संरचना होती है। फिर वे ही क्षीरोदकशायी विष्णुरूप धारण करके सृष्टि के अणु-अणु में व्याप्त हो जाते हैं। इस श्लोक में यह तत्त्वनिरूपण है।

जहाँ तक जीवात्माओं का सम्बन्ध है, अपरा प्रकृति में उनका गर्भाधान किया जाता है, जिससे पूर्वकर्म के अनुसार उन्हें विभिन्न योनियों की प्राप्ति होती है। इस प्रकार यह प्राकृत-जगत् क्रियान्वित हो उठता है। सृष्टि के आदि-काल से सभी भिन्न-भिन्न जीवयोनियों के कार्य-कलाप प्रारम्भ हो जाते हैं। ऐसा नहीं कि ये योनियाँ क्रमशः प्रकट होती हों। सब जीवयोनियों की सृष्टि ब्रह्माण्ड-रचना के साथ होती है। मनुष्य, पशु, पक्षी, आदि की एक साथ सृष्टि होती है, क्योंकि प्रलय के समय जीव जिस-जिस योनि की इच्छा रखते हैं, अगली सृष्टि होने पर वे उसी योनि में प्रकट होते हैं। यहाँ निश्चित रूप से कहा गया है कि जीव इस प्रक्रिया में सर्वथा परवश हैं। उनकी प्राचीन वासना ही भगवत्-संकल्प के अनुसार फिर प्रकट होती है। यह श्रीभगवान् की अचिन्त्य शक्ति का ही प्रभाव है कि विभिन्न जीवयोनियों की सृष्टि करने पर भी वे उनसे असंग बने रहते हैं। जीव की कर्मवासना के कारण सृष्टि होती है; अतएव श्रीभगवान् स्वयं उसमें नहीं पड़ते।